वञे कीन कही, महिमा साधूअ संग जी,
मन, बुधि, वाणीअ खों परे, ऊन्हीं अणमई,
साख ड्रियनि सामी चए, आशिक अनभई,
पंहिंजीअ मंझि पई, सदा माणिनि सांति सुखु.

सामी साहब कहते हैं कि साधु-संत की संगति की महिमा मुझसे कहीं नहीं जाती। सत्संग की महिमा इतनी गहन, अथाह और अमान है कि मेरा मनु, बुद्धि एवं वाणी भी वर्णन करने में असमर्थ है। अनुभव करने वाले ईश्वर प्रेमी भी इसी तथ्य के साक्षी हैं। ऐसे ही सच्चे प्रेमी जन संतों की संगति का लाभ प्राप्त कर अपने ही भीतर आत्मा के दर्शन कर सदा ही शांति एवं अलौकिक सुख भोगते हैं।

अध्यात्म अथवा परमार्थ के क्षेत्र में 'सत्संग'/संतों की संगति महत्वपूर्ण मानी गयी है। साधु-संत का सहवास प्राप्त होना भाग्य का लक्षण माना गया है। श्रीमद् भागवत में बताया गया है कि सत्संग द्वारा अनेक जीवों का उद्धार हो गया है। संतों के संग से सुग्रीव, जटायु, जांबुवंत, गजेंद्र, कुब्जा और गोकुल की गोपियों का उद्धार हो गया। क्योंकि संत साख्यात् परमेश्वर का रूप होते हैं। वस्तुत: सत्संगति की महिमा का वर्णन करने के लिए शब्द पंगु प्रतीत होने लगते हैं।

महाराष्ट्र के एक महान संत के शब्दों में, ''सच्चे संत परमेश्वर के नाम की महिमा का गान करते हैं। समाज में नाम-स्मरण का प्रचार करना मानो समाज पर संतों द्वारा किया हुआ उपकार है। हजारों-लाखों को भगवान के नाम स्मरण की और उन्मुख करना उनका महत् कार्य है। संत जन सूर्य की भाँति समाज पर उपकार करते हैं। परमेश्वर प्राप्ति का सही मार्ग बताने वाले संत निस्स्वार्थी एवं परोपकारी ही होते हैं। सामान्यजनों को 'तुम विषयों के नहीं अपितु भगवान के हो। कहकर प्रतीति कराते हैं कि ''विषयों के प्रति अपनी आसक्ति कम करने का प्रयत्न करो।'' संत निर्भय होते हैं। उनकी मधुर वाणी का प्रभाव लाखों लोगों पर देखा जा सकता है। संतों में बहुत अधिक सामर्थ्य होता है। सत्संगति से मन में सद्विचार निर्माण होते हैं। संत समाज का हित/कल्याण करने वाले होते हैं। स्वयं महान संतों ने भी परमेश्वर से संतों की संगति ही माँगी है। अर्थात् वे मुक्ति/मोक्ष की अपेक्षा सत्संगति को ही अधिक महत्व देते हैं। संत तुकाराम महाराज के शब्दों में '**न लगे मुक्ति आणि धनसंपदा। सतसंग देई सदा।।**' स्वामी स्वरूपानंद ने संतों को 'आनंद की खान' कहा है। संत ज्ञानेश्वर कहते हैं, ''**चंद्रमें जे अलांछन। मार्तंड ते तापहीन। ते सर्वाही सदा सज्जन। सोयरे हेतु।।**''

सतसंगति को फल यही, संसय रहहि न लेस।
हुवै अस्थिर शुचि सरल चित, पावै पुनि न कलेस।।

■